www.thearyasamaj.org

ओ३म्

वार्षिक शुल्क 50/- रु.
आजीवन 500/- रु.
इस अंक का मूल्य 5/- रुपये

आर्य प्रेरणा

कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

(आर्यसमाज राजेन्द्र नगर का मासिक मुख-पत्र)
दूरभाषः 011-25760006 Website - www.aryasamajrajindernagar.org
वर्ष-6 अंक 10, मास अक्टूबर 2013 विक्रमी संवत् 2070, दयानन्दाब्द 189 सृष्टि संवत् 1960853112
परामर्शदाता - श्री अशोक सहगल, प्रबन्धक - श्री सतीश मैहता

विष्णु का चरित्र कल्याणकारी है

- ओमप्रकाश भोला

विष्णोः कर्माणि पश्यत, यतो व्रतानि पस्पशे।
इन्द्रस्य युज्यः सखा।

ऋग्वेद 1.22.19

(विष्णोः) सर्वव्यापक-विष्णु की (कर्माणि) कृतियों को (पश्यत) हे मनुष्यो! तुम लोग निहारो। (यतः) जिस कर्म समूह से प्राणी (व्रतानि) विविध कर्मशृंखलाओं को (पस्पशे) स्पर्श कर पाता है- प्राप्त करता है। (इन्द्रस्य) वह विष्णु इंद्र, यानी, आत्मा का (युज्यः सखा) अनुकूल-कल्याणकारी मित्र है।

इस सृष्टि के कण-कण में, अणु-अणु में बसने वाला विष्णु इस संपूर्ण जगत् का कारण है क्योंकि प्राणियों की उत्पत्ति, स्थिति, प्रलय का आधार वही है। इतना ही नहीं, ये सब प्रत्यक्ष दिखने वाले प्राणी जिससे उत्पन्न होते हैं, उत्पन्न होकर जिसके सहारे जीवित रहते हैं तथा अन्त में प्रयाण करते हुए जिसमें प्रवेश करते हैं, उसी को और उसके कर्मों को जानने की इच्छा हम करें। वही सर्वज्ञ, सर्व-अन्तर्यामी, सर्वव्यापी ब्रह्म विष्णु है। सर्वव्यापक विष्णु की दिव्य कृतियां चारों ओर बिखरी हुई हैं। आओ, उसे निहारने का प्रयास करें।

फूलों की मुस्कान में, पर्वतों के आरोह-अवरोह में, नक्षत्रों के विस्तार में, चन्द्रमा की चांदनी में, सूर्य की अरुणिमा में, वृक्षों की हरियाली में और आकाश की नीलिमा में उसके सौंदर्य के दर्शन होते हैं।

खेतों की लहलहाती बालियों में, वृक्षों की सघनता में, लताओं के झुरमुटों में, वन की नीरवता में, सागर की स्तब्धता में और श्मशान की जड़ता में उसी की शक्ति बिखरी हुई है।

पर्वतों की ऊंचाई, सागर की गहराई, सूर्य के प्रकाश, चन्द्रमा की शीतलता, आग के तेज, पवन की गति, आकाश के विस्तार और पृथ्वी के गर्भ में निहित अनन्त खनिज उसकी गरिमा की याद दिलाते हैं।

वनस्पतियों की विविधता, जीवों की अनेकरूपता, पशु-पक्षियों की विलक्षणता, जड़-चेतन की उपादेयता और सृष्टि की अलौकिकता उस 'महाशक्ति, महाद्युतिः हिरण्यय' प्रभु का ही परिचय दे रही है।

चिड़ियों की चहचहाहट में, भ्रमर की गुंजार में, कोयल की कूक में, पपीहे की 'पी पी' में, नदियों के कलरव में, पत्तों की झनझनाहट में और वायु की 'सांय-सांय' में उसी प्रभु की मधुर अभिव्यक्तियां सुनाई देती हैं, 'ओ३म्' की मधुर ध्वनि प्रकट होती है। उस विराट् पुरुष की गंभीर ध्वनि बादलों की गड़गड़ाहट में, बिजली की कड़कड़ाहट में, शेरों की गर्जन में, सागर की उत्ताल तरंगों में, भूचाल के भीषण आघातों में और तूफान के झकझोरों में सुनाई देती है।

शिशु के लावण्य में, युवती के सौंदर्य में, पुरुष के पौरुष में, विद्वान् की विद्वत्ता में, तेजस्वी के तेज में, वीर की वीरता में और गुरु के गुरुत्व में उसी प्रभु का आकर्षण हमें अपनी ओर आकृष्ट करता है। वास्तुकार की हथोड़ी में, मूर्तिकार की छैनी में, चित्रकार की तूलिका में, संगीतकार के स्वर में और कवि की लेखनी में उसी प्रभु की शक्ति काम कर रही है।

'आर्य-प्रेरणा' में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार एवं दृष्टिकोण सम्बन्धित लेखक के हैं। सम्पादक अथवा प्रकाशक का उनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है।

www.thearyasamaj.org

हम पृथ्वी में बीज डालते हैं, पर वह कौन-सी शक्ति है जो आम को मीठा रस, मिर्च को तीता रस, नींबू को खट्टा रस और अनन्त फलों तथा वनस्पतियों को अलग-अलग रस दे रही है? चम्पा, चमेली, गुलाब, कमल, आदि फूलों को अलग-अलग सुगन्ध कौन दे रहा है?

आह, अपार जलराशि के बीच पृथ्वी का ठेला कैसे खड़ा है? ये सूर्य, चन्द्र, मंगल, बुध, आदि ग्रह और अनन्त लोक-लोकांतर बिना किसी सहारे कैसे रुके हुए हैं? इन समस्त ग्रहों, नक्षत्रों और कोटि ब्रह्माण्ड में रहने वाले जीवों को कौन नचा रहा है?

मां के गर्भ के करोड़ों प्रकार के जीवों की रचना करके उनमें जल, वायु, अग्नि, पृथ्वी, आकाश, आदि तत्वों का संयोजन करके तथा उनकी अनन्त सूक्ष्म नाड़ियों में रक्त, वायु, आदि का संचार करके उनमें मन, बुद्धि, चित्त, अहंकार, आदि को पुष्ट करके उनको नित्य नया रूप कौन दे रहा है?

हे मानव! तू विश्वास कर कि वह सर्वशक्तिमान ईश्वर (विष्णु) ही तो है जो कोटि ब्रह्मण्डों की रचना करके कोटि प्रकार के जीवों में स्वयं ही विराजमान हो रहा है। वही एक सत्य है। कण-कण में उसके जलवे दिखाई देते हैं, फिर यह मानव कैसे कहता है कि ईश्वर कहां है?

ईश्वर के कार्यों को, उसकी अद्भुत सृष्टि रचना को देख और सोच कि चन्द्रमा ने शीतलता कहां से ली है? सूर्य में किसका प्रकाश है? असंख्य आदित्यों में किसका तेज काम कर रहा है? यह सब ईश्वर का कार्य ही तो है। जो ईशा वास्यमिदं सर्वम्, इतना जान लेता है वह सर्वत्र ईश्वर दर्शन कर कृतार्थ हो जाता है और ईश्वर को अपना कल्याणकारी सखा मानकर शुभ कर्म करने की सतत प्रेरणा प्राप्त करता है।

तनाव से बचने के उपाय

1. प्रातःकाल सूर्योदय के पूर्व उठकर दिनचर्या करना।
2. प्रातःकाल खुली हवा में भ्रमण करना तथा आसन-व्यायाम करना।
3. प्रातःकाल के शांत, स्वच्छ वातावरण में योग-ध्यान, प्राणायाम का अभ्यास करना।
4. अपनी दिनभर की दिनचर्या यथा भोजन, विश्राम, आदि को सुव्यवस्थित करना।
5. वाणी में मधुरता लाना तथा परिवार जनों, पड़ौसियों, मित्रों एवं सहकर्मियों आदि के साथ मधुर संबंध बनाये रखना।
6. ईमानदारीपूर्वक एवं सावधानीपूर्वक धंधा, व्यापार, नौकरी आदि कर्त्तव्य कर्म करना।
7. झूठ, छल, कपट, निंदा, चुगली, कठोर वाणी, ईर्ष्या-क्रोध आदि का त्याग कर सदा सत्य बोलना।
8. व्यवहार में विनम्रता, प्रेम, मधुरता, निरभिमानता आदि को धारण करना।
9. आलस्य-प्रमाद आदि दोषों को दूर कर पुरुषार्थी बनना।
10. अपनी त्रुटि-भूल को स्वीकार कर उसे दूर करने हेतु प्रयत्न करना।
11. अपने कार्यों की सूची बनाना तथा मुख्य कार्य पहले और गौण कार्य बाद में करना।
12. किसी भी व्यक्ति वस्तु या घटना के विषय में यथार्थ जानकारी प्राप्त किये बिना मिथ्याधारणा न बनाना।
13. अपने माता-पिता, गुरु-आचार्य, पालक के आदर्शों के अनुकूल चलना कभी इनसे झगड़ा न करना।
14. ऋषियों, मुनियों, महापुरुषों तथा सत्यशास्त्रों के अनुसार जीवन पथ पर चलना।
15. अनावश्यक वस्तुओं एवं विचारों का संग्रह न करना।

तनाव को हटाने के उपाय

(तनाव की स्थिति उत्पन्न होने पर इसे दूर करने हेतु सोचने का ढंग)

1. हर व्यक्ति हमारे विषय में कुछ भी सोचने, बोलने व करने में स्वतंत्र है। अर्थात् कोई भी व्यक्ति, कभी भी हमारे प्रति अच्छा या बुरा व्यवहार कर सकता है। 2. कोई भी प्रतिकूल व्यवहार होने पर "कोई बात नहीं" सोचकर धैर्य को धारण करें। 3. "यह समय भी बीत जाएगा" सोचकर सहनशील बनें। 4. "ईश्वर न्याय करेगा" मानकर शांत रहें तथा किसी से द्वेष न करें। 5. "ऐसा भी होता है" 100 प्रतिशत से सुख नहीं मिल सकता है, इसे हमेशा याद रखें। 6. "दुनियाँ में कोई भी घटना नई नहीं होती है" इसका दृढ़ निश्चय करें।

7. संसार में कोई ऐसा व्यक्ति नहीं मिलेगा जिसके साथ कभी कोई अप्रिय अन्याय, विश्वासघात युक्त घटना न घटी हो। 8. हर व्यक्ति अल्पज्ञ होता है उससे जाने, अनजाने में भूल हो सकती है।

9. कोई भी व्यक्ति हमें पूरा-पूरा (जैसे हम हैं वैसे) नहीं समझ सकता है। केवल ईश्वर ही हमें पूरा-पूरा समझने वाला है। 10. कभी किसी से अति आग्रह न करें कि जैसे कहा है- सामने वाला वैसे ही करेगा। 11. एक साथ अनेक कार्य आरम्भ न करें। 12. किसी घटना विशेष, परिस्थिति विशेष या व्यक्ति विशेष के कारण मन में अशांति तनाव की स्थिति बनती हो और अनेक उपाय करने पर भी वह दूर न होती हो तो कुछ समय के लिए उस स्थान को छोड़कर अन्यत्र चले जाना चाहिये जब तक कि मनःस्थिति सामान्य न हो जाए। 13. आनंदित करने वाली जीवन की महत्त्वपूर्ण घटनाओं को याद करें। 14. तनाव आदि विपरीत स्थिति के आने पर मौन होकर ओ३म् या गायत्री मंत्र आदि अर्थ सहित जप करें। 15. मानसिक तनाव या मानसिक अशांति की स्थिति में मौन होकर ईश्वर का ध्यान नहीं हो पा रहा हो तो सुमधुर भजन सुनना या गाना चाहिये तथा प्राकृतिक रूप से मनोरम स्थल में जाना चाहिये।

-स्वामी शान्तानन्द सरस्वती कच्छ, गुजरात

www.thearyasamaj.org

जीवन कर्म से चलता है या अचानक चल रहा है?

- चूडामणि शास्त्री शाण्डिल्य

कर्मापेक्षं स्वतःसिद्धं जन्मेदम्?

यह जन्म कर्म से चलता है या अकस्मात् चल रहा है? यह संशय प्रायः सब को होता ही रहता है। इसका ठीक-ठीक उत्तर यह है कि जन्म या जीवन, कर्मों से ही चल रहा है- जैसा कारण होगा वैसा ही कार्य्य होगा। शरीर की रचना में भी उस जीव के कर्मों से प्रेरणा पाकर ही पांच तत्व अपना-अपना काम कर रहे हैं। यदि यह शरीर रचना कर्म सम्बन्ध के बिना होती - अपने आप होती तो सबका शरीर एक जैसा होता-जब कि पांच तत्व सब के लिये बराबर हैं। किन्तु ऐसा होता नहीं।

हम लोग, सब की शरीर रचना और इन्द्रिय रचना को भिन्न-भिन्न रूप में देखते हैं-कोई तो हमें जहां रूपवान मिलता है वहां वह स्वस्थ भी मिलता है। इसके विपरीत कोई व्यक्ति हमें जहां कुरूप मिलता है तो वहां रोगी भी साथ ही मिलता है। इसके विपरीत कोई-है तो कुरूप, पर स्वस्थ है और सुख सम्पन्न है। दूसरा देखने में तो सुरूप मिलता है किन्तु रोगी और दुःखों से घिरा हुआ मिलता है।

कोई तो हमें ऐसा गौरवर्ण मिलता है कि उसे चन्द्र से उपमा मिल जाती है किन्तु कोई इतना कृष्णवर्ण मिलता है कि उसे राहु की उपमा दी जाती है। कोई काला होता हुआ भी सब को आकर्षक देखा जाता है पर दूसरा गोरा होता हुआ भी आकर्षक नहीं होता। कोई धन से अधिक सुखी और कोई निर्धनता से अधिक दुःखी। कोई इन्द्रियों में पूरा और कोई अन्धा लंगडा बहिरा गूंगा हो जाता है। कोई दीर्घायु मिलता है तो कोई अल्पायु। कोई दासता में जन्म बिता रहा होता है तो कोई दासों से काम ले रहा मिलता है।

कोई पूरा स्वस्थ रह कर दीर्घकाल तक रहता है तो कोई रोगी बनकर ही दीर्घायु प्राप्त करता है। कोई स्वस्थ रहता हुआ भी शीघ्र मर जाता है तो कोई बचपन में मृत्यु का आस बन जाता है। इस नानाशरीर रचना में कर्मफल का मार्ग ही ठीक बैठता है यह भेद अचानक होता हुआ नहीं माना जा सकता। अतः इस भेद का कारण पूर्वजन्म का कर्म ही मानना ठीक बैठता है।

जैसे रथ मोटर आदि यान और नाना प्रकार के घर घाट, कर्मों से ही बनाये जाते हैं, तब देह रथ भी कर्मों से ही बना हुआ मानना चाहिये। **अतः उत्तम कर्मों से देह को पुष्ट करो, पाप कर्मों से इसे मोटा ताजा न बनाओ। पाप से पालापोसा शरीर तो अन्त में कभी न कभी दुःख ही भोगेगा।**

हम यह भी देखते हैं कि पापी भी उद्यम द्वारा अपने जीवन को सुखी बनाने में देखे गये हैं परन्तु वहां भी कोई पूर्व सुकर्म ही सुख का कारण होता है जो उन्हें वैसा उद्यम सूझ जाता है। लौकिक उद्यम पूरा कर देने पर भी सभी ठीक क्यों नहीं होते? हम तो उसमें भी अनुकूल या प्रतिकूल कर्म ही देख रहे होते हैं। अतः वर्तमान उद्योग का गर्व कभी न करना चाहिये। जो नास्तिक लोग ऐसा विचार रखते हैं कि यह सब कुछ भाग्य के ही अधीन बनता है कर्म कुछ नहीं। या प्रभु की इच्छा ही वैसी थी, ऐसा आस्तिक भी कभी-कभी कह देते हैं। हम उन्हें अदूरदर्शी मानते हैं वे आगे नहीं जाते।

जो लोग सब कुछ भगवान का चमत्कार मानकर कर्मों से विमुख हो जाते हैं या यू कह देते हैं कि यह सब प्रकृति का खेल है, तब हम उन्हें इतना ही कह देते हैं कि-प्रभु या प्रकृति अन्यायी कैसे बन गई कि एक को अधिक सुखी और सुन्दर बना दिया और दूसरे को उसके विपरीत। अतः यह मत हृदय में नहीं जमता। जो लोग यह मानते है कि सभी काम अचानक ही हो रहे हैं, कर्म कुछ भी नहीं है। उनको यह बात याद रखनी चाहिए कि ऋषियोंने 'अचानक' भी प्रभुका एक नाम ही माना है। काल, स्वभाव नियति और यदृच्छा (अचानक) ये सब के सब प्रभु के ही नाम हैं। हमें तो भिन्न-भिन्न कर्मों से ही स्थिति मानना ठीक जमता है-सुकर्म हैं तो सब कुछ सुन्दर, नहीं तो सब कुछ विपरीत।

कुछ मूर्ख विद्वान् ऐसा मानते हैं कि पुरुष सदा पुरुष ही जन्मते हैं स्त्रियां सदा स्त्री रूप में ही जन्मती हैं। वे लोग दूर की नहीं सोचते। पुण्य अधिक होता है तो स्त्री का चोला मिलता है। पुण्य कम हो तो पुरुष का जन्म मिलता है। परन्तु वेद में ऐसा मिलता है कि **'उत त्वा स्त्री' शसीयसी पुंसो भवति वस्यसी अदेवत्राद् अराधसः।** ऋ. 5-61-3।। पुरुष और स्त्री के काम, यदि प्रभु के सम्मुख तोले जायें तो स्त्री का पलड़ा भारी उतरता है भक्त और दानी पति ही बराबर उतरता है। जितना दायित्व सन्तान के निर्माण में पालन में और सेवा कार्य में स्त्री का होता है उतना पुरुष का नहीं होता माता तो सन्तान की निर्माता होती है किन्तु पिता केवल पालक होता है। वेद में पति कहता है 'द्यौरहं पृथिवी त्वम्' मैं आकाश का काम करूंगा तू पृथिवी का काम करेगी, आकाश तो केवल जल ही बरसा देता है किन्तु अन्न, फल, ओषधि, वनस्पति और सोना चांदी, तेल, कोयला आदि देना तो पृथिवी के भाग में आता है तभी तो इतना बड़ा दायित्व स्त्री को मिला है। इसलिए हमें स्त्री जाति का हृदय से सत्कार करना चाहिए। एक बात और भी है- स्त्री पूर्व पुण्यों के प्रभाव से स्वभावतःसत्य बोलने वाली होती है, यत्नतः असत्य नहीं बोलती। उपनिषद में जबाला ने पुत्र को सत्य कह दिया था कि 'मैं यौवन में बहुत स्थानों में घुमती रही हूँ, मैं नहीं जान सकती कि तू किस गोत्र का है'। स्वभाव से जितनी

www.thearyasamaj.org

संयता- ब्रह्मचारिणी-इन्द्रियों पर स्वशासन करने वाली स्त्री होती है, पुरुष उतना नहीं होता। जितना दान पुण्य शुभ कर्म स्त्री करती है, पुरुष उतना नहीं करता। जब पुरुष किसी स्त्री को बलात् गिराता है तब वह गिर भी जाती है, फिर वह गिरती-गिरती इतनी गिर जाती है कि वेश्या तक तो बन जाती है। परन्तु यह पतन उसके स्वभाव में नहीं होता। व्यास जी ने भी ऐसा ही लिखा है कि 'नापराधोऽस्ति नारीणां नर एवापराध्यति'। 'स्त्री का प्रथम अपराध नहीं होता, पहला अपराध तो पुरुष का होता है, अतः स्त्री बुराईसे बचती चलती है स्त्रीका नैसर्गिक सौन्दर्य भी उस के पुण्य का परिचायक माना जाता है जितना आकर्षक रूप स्त्रीका होता है पुरुष का उतना आकर्षक नहीं होता। अतः स्त्री कोई घटिया वस्तु नहीं मानी गयी है। भारतीय स्त्रीका ठीक रूप यही है।

जैसे नाना प्रकार के शरीरों को निर्माण कर्मानुसार सिद्ध होता है। वैसे ही अमुक आत्मा का अमुक देह से संयोग और वियोग भी- जीवन और मृत्यु भी अपने-अपने कर्म से ही ठीक जमता है। इस सुख दुःख व्यवस्था या संयोग वियोग में कर्म को हम 'बीज मानें और जन्म तथा मृत्यु को मानें फल। यह शरीर क्षेत्र है हम क्षेत्रज्ञ हैं और कर्म बीज है जैसा बोयें वैसा काटें। बस यही भारतीय व्यवस्था चली आयी है।

जबकि हम स्थिर कर चुके हैं कि कर्मों की विचित्रता से फल में विचित्रता आती है तो निश्चय हो जाता है कि यह जगत् कर्म प्रधान है ईश्वर को तो हम फलदाता मानकर उसका अत्युत्तम प्रबन्ध मानकर उस प्रबधकर्ता को याद करते चलें कि कहीं हम प्रमाद या अज्ञान में आकर कुकर्म न कर बैठें। जब हमें निश्चय हो गया कि सभी सुख या सुखसामग्री किसी पुण्य का फल है तो हमें आगे को पुण्य ही संचित करते चले जाना चाहिये कहीं भूलकर भी हम पाप में न लग जायें।

ओ३म्

ऋषि दयानन्द वाणी

संग्रहकर्ता - कृष्ण चन्द्र विरमानी

धर्म कभी मत छोड़ो

"मनुष्यों को योग्य है कि काम से, अर्थात् झूठ से कामना सिद्ध होने के कारण से वा निन्दा स्तुति आदि के भय से भी धर्म का त्याग कभी न करें और न लोभ से, चाहे झूठ (और) अधर्म से चक्रवर्ती राज्य भी मिलता हो, तथापि धर्म को छोड़कर चक्रवर्ती राज्य को भी ग्रहण न करे। चाहे भोजन-छादन, जलपान आदि की के लिये भी धर्म को कभी न छोड़े, क्योंकि जीव और धर्म नित्य हैं तथा सुख दुःख दोनों अनित्य हैं। अनित्य के लिये नित्य को छोड़ना अतीव दुष्ट कर्म है। इस धर्म का हेतु कि जिस शरीर आदि से धर्म होता है वह भी अनित्य है। **धन्य वे मनुष्य हैं जो अनित्य शरीर और सुख दुःखादि के व्यवहार में वर्त्तमान होकर नित्य धर्म का त्याग कभी नहीं करते"।**

(संस्कार विधि गृहस्थ)

"सब जगत् की प्रतिष्ठा धर्म ही है। धर्मात्मा का ही लोक में विश्वास होता है, धर्म से ही मनुष्य लोग पापों को छुड़ा देते हैं, जितने उत्तम काम हैं वे सब धर्म में ही लिये जाते हैं। इसलिये सबसे उत्तम धर्म को ही जानना चाहिये"।

(ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका, वेदोक्त धर्म विषय)

झूठ कभी मत बोलो

"जिस वाणी से सब व्यवहार, निश्चित वाणी ही जिनका मूल (है) और जिस वाणी ही से सब व्यवहार सिद्ध होते हैं, जो मनुष्य उस वाणी को चोरता अर्थात् मिथ्या भाषण करता है वह जानो सब चोरी आदि पाप ही को करता है, इस लिये मिथ्या भाषण को छोड़ के सदा सत्य भाषण ही किया करें"। (संस्कार विधि गृहस्थ)

आयु को बढ़ाओ

"आयु, वीर्यादि धातुओं की शुद्धि और रक्षा करना तथा युक्ति-पूर्वक ही भोजन और वस्त्र आदि का जो धारण करना है, इन अच्छे नियमों से उमर को सदा बढ़ाओ"।

(ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका, वेदोक्त धर्म)

अपने रूप को बढ़ाओ

"अत्यन्त विषय सेवा से पृथक् रह के और शुद्ध वस्त्रादि धारण से शरीर का स्वरूप सदा उत्तम रखना"।

(ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका, वेदोक्त धर्म)

अपना नाम पैदा करो

"उत्तम कर्मों के आचरण से नाम की प्रसिद्धि करनी चाहिये जिससे अन्य मनुष्यों का भी श्रेष्ठ कर्मों में उत्साह हो"।

(ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका, वेदोक्त धर्म)

अपना यश बढ़ाओ

"श्रेष्ठ गुणों के ग्रहण के लिये परमेश्वर के गुणों का श्रवण और उपदेश करते रहो जिससे तुम्हारा भी यश बढ़े"।

(ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका, वेदोक्त धर्म)

गृहस्थ रहकर भी तुम ब्रह्मचारी कहला सकते हो

" (हां) जो (गृहस्थ) अपनी ही स्त्री से प्रसन्न, निषिद्ध रात्रियों में स्त्री से पृथक् रहता है और ऋतुगामी होता है वह गृहस्थ भी "ब्रह्मचारी" के सदृश है"। (स.प्र.स. 4)

"जो पूर्व निन्दित 8 रात्रि कह आये हैं उनमें जो स्त्री का संग छोड़ देता है, वह गृहस्थाश्रम में बसता हुआ भी "ब्रह्मचारी" कहाता है"। (संस्कार विधि गर्भाधान)

अधर्म से धन सञ्चय मत करो

गृहस्थ कभी किसी दुष्ट के प्रसंग से द्रव्य सञ्चय न करे, न विरुद्ध कर्म से, न विद्यमान पदार्थ होते हुए उनको गुप्त रख के (न) दूसरे से छल करके और चाहे कितना ही दुःख (आ) पड़े, तथापि अधर्म से द्रव्य सञ्चय कभी न करे।"

(संस्कारविधि, गृहस्थ)

प्रतिज्ञा का पालन जरूर करो

"जैसी हानि प्रतिज्ञा को मिथ्या करने वाले की होती है, वैसी अन्य किसी की नहीं (होती)। इससे जिसके साथ जैसी प्रतिज्ञा करनी, उसके साथ वैसी ही पूरी करनी चाहिये। अर्थात् जैसे किसी ने किसी से कहा कि 'मैं तुमको वा तुम मुझसे अमुक समय में मिलूगां वा मिलना, अथवा अमुक वस्तु अमुक समय में तुमको मैं दूंगा' इसको वैसे

www.thearyasamaj.org

ही पूरी करे, नहीं तो उसकी प्रतीति कोई भी न करेगा, इसलिये सदा सत्य भाषण और सत्य प्रतिज्ञायुक्त सबको होना चाहिये।"

(स.प्र.स. 2)

नित्य कर्मों और स्वाध्याय में नागा मत करो

"वेद के पढ़ने पढ़ाने, सन्ध्योपासनादि पंच महायज्ञों के करने और होम मन्त्रों में अनध्याय-विषयक अनुरोध (आग्रह) नहीं है, क्योंकि नित्य कर्मों में अन-ध्याय नहीं होता, जैसे श्वास प्रश्वास सदा लिये जाते हैं (और) बन्द नहीं किये जा सकते, वैसे नित्य कर्म प्रतिदिन करना चाहिये न किसी दिन छोड़ना।"

(स.प्र.स. 3)

दूसरे के दोषों को मुंह पर कहो

"सत् पुरुषों को योग्य है कि मुख के सामने दूसरे का दोष कहना और अपना दोष सुनना। परोक्ष में दूसरे के गुण सदा कहना।"

"और दुष्टों की यही रीति है कि सन्मुख में गुण कहना और परोक्ष में दोषों का प्रकाश करना। जब तक मनुष्य दूसरे से अपने दोष नहीं कहता तब तक मनुष्य दोषों से छूट कर गुणी नहीं हो सकता।"

(स.प्र.स. 4)

यदि सभा में जाओ तो हमेशा सत्य बोलो

"धार्मिक मनुष्य को योग्य है कि सभा में कभी प्रवेश न करे और जो प्रवेश किया हो, तो सत्य ही बोले। जो कोई सभा में अन्याय होते हुए को देखकर मौन रहे, अथवा सत्य न्याय के विरुद्ध बोले, वह महापापी होता है।

"जिस सभा में अधर्म से धर्म, असत्य से सत्य, सब सभासदों के देखते हुए मारा जाता है, उस सभा में सब मृतक के समान हैं, जानो उनमें कोई भी नहीं जीता है।" (स.प्र.स. 6)

शरीर और आत्मा का बल साथ-साथ बढ़ाओ

"शरीर बल (के) बिना (केवल) बुद्धि बल का क्या लाभ? इसलिये शरीर बल सम्पादन करने के लिये और उसकी रक्षा करने के लिये बहुत प्रयत्न करते रहना चाहिये।"

(पूना का व्याख्यान 3, धर्माधर्म विषय)

"शरीर और आत्मा में पूर्ण बल सदा रहे, क्योंकि जो केवल आत्मा का बल, अर्थात् विद्या ज्ञान बढ़ाते जाये और शरीर का बल न बढ़ावें, तो एक ही बलवान् पुरुष ज्ञानी और सैंकड़ों विद्वानों को जीत सकता है, और जो केवल शरीर ही का बढ़ाया जाये, (और) आत्मा का नहीं, तो राज्य-पालन की उत्तम व्यवस्था बिना विद्या के कभी नहीं हो सकती.....इसलिये सर्वदा शरीर और आत्मा के बल को बढ़ाते रहना चाहिये।"

(स.प्र.स. 6)

तुम बिना पढ़े भी धर्मात्मा हो सकते हो

"जो मनुष्य विद्या पढ़ने का सामर्थ्य तो नहीं रखे और वह धर्माचरण करना चाहे, तो विद्वानों के संग और अपने आत्मा की पवित्रता और अविरुद्धता से धर्मात्मा अवश्य हो सकता है, क्योंकि सब मनुष्यों का विद्वान् होना तो सम्भव ही नहीं, परन्तु धार्मिक होने का सम्भव सब के लिये है।"

(व्यवहार भानु)

"विद्वान् होने का तो सम्भव नहीं, परन्तु जो धर्मात्मा हुआ चाहें, तो सभी हो सकते हैं। अविद्वान् लोग दूसरों को धर्म में निश्चय नहीं करा सकते और विद्वान् लोग धार्मिक होकर अनेक मनुष्यों को भी धार्मिक कर सकते हैं और कोई धूर्त मनुष्य अविद्वान् को बहका के अधर्म में प्रवृत्त कर सकता है, परन्तु विद्वान् को अधर्म में कभी नहीं चला सकता ।" (व्यवहार भानु)

इन सम्प्रदायों को उखाड़ डालो

"सब सज्जनों को श्रम उठाकर इन सम्प्रदायों को जड़-मूल से उखाड़ डालना चाहिये। जो कभी उखाड़ डालने में न आवे, तो अपने देश का कल्याण कभी होने का ही नहीं।"

(शिक्षापत्री, ध्वान्त निवारणम्)

साहसी विद्यार्थी

(2 अक्टूबर जन्म दिवस)

एक लड़का काशी में हरिश्चन्द्र हाई स्कूल में पढ़ता था। उसका गाँव काशी से 8 मील दूर था। वह रोजाना वहाँ से पैदल चलकर आता, बीच में जो गंगा नदी बहती है उसे पार करता और फिर विद्यालय पहुँचता।

उस जमाने में गंगा पार करने के लिए नाववाले को दो पैसे देने पड़ते थे। दो पैसे आने के और दो पैसे जाने के, कुल चार पैसे यानी पुराना एक आना। महीने में करीब दो रूपये हुए। आज के तो हजार रुपये हो जायें।

उस लड़के ने अपने माँ-बाप पर अतिरिक्त बोझा न पड़े इसलिए एक भी पैसे की माँग नहीं की। उसने तैरना सीख लिया। गर्मी हो, बारिश हो कि ठण्डी हो गंगा पार करके हाई स्कूल में जाना उसका क्रम हो गया। ऐसा करते-करते कितने ही महीने गुजर गये।

एक बार पौष मास की ठण्डी में वह लड़का सुबह की स्कूल के लिए गंगा में कूदा। तैरते तैरते मझधार में आया। एक नाव में कुछ यात्री नदी पार कर रहे थे। उन्होंने देखा कि छोटा-सा लड़का अभी डूब मरेगा। वे नाव को उसके पास ले गये और हाथ पकड़कर उसे नाव में खींच लिया। लड़के के मुख पर घबराहट या चिन्ता का कोई चिन्ह नहीं था। सब लोग दंग रह गये कि इतना छोटा है और इतना साहसी! वे बोले-

"तू अभी डूब मरता तो? ऐसा साहस नहीं करना चाहिए।"

तब लड़का बोला : "साहस तो होना ही चाहिए। जीवन में विघ्न-बाधाएँ आयेंगी, उन्हें कुचलने के लिए साहस तो चाहिए ही। अगर अभी से साहस नहीं जुटाया तो जीवन में बड़े-बड़े कार्य कैसे कर पायेंगे?"

लोगों ने पूछा: "इस समय तैरने क्यों आये? दोपहर को नहाने आते?"

लड़का बोलता है: "मैं नदी में नहाने के लिए नहीं आया हूँ, मैं तो स्कूल जा रहा हूँ।"

"फिर नाव में बैठकर जाते?

"रोज के चार पैसे आने-जाने के लगते हैं। मेरे गरीब माँ-बाप पर मुझे बोझ नहीं बनना है। मुझे तो अपने पैरों पर खड़े होना है। मेरा खर्च बढ़ेगा तो मेरे माँ-बाप की चिन्ता बढ़ेगी, उन्हें घर चलाना मुश्किल हो जायेगा।"

लोग उस लड़के को आदर से देखते ही रह गये। वही साहसी लड़का आगे चलकर भारत का प्रधानमंत्री बना। वह लड़का था लालबहादुर शास्त्री। शास्त्रीजी उस पद पर भी सच्चाई, साहस, सरलता, ईमानदारी, सादगी, देशप्रेम आदि सद्गुण और सदाचार के मूर्तिमन्त स्वरूप थे। ऐसे महामानव भले फिर थोड़े समय ही राज्य करें पर एक अनोखा प्रभाव छोड़ जाते हैं जनमानस पर।

प्रेषक - संयम सहगल

www.thearyasamaj.org

गायत्री-मन्त्र की उपयोगिता

-आचार्य भगवानदेव वेदालंकार

"गायत्री-मन्त्र की महिमा" चारों वेदों में, स्मृति ग्रन्थों में, उपनिषदों में, महाभारत में, ऋषियों, मुनियों, विद्वान् आचार्यों ने मुक्त कण्ठ से गायी है। गायत्री दुःख हरणी, पाप नाशनी, सुखदायिनी, बुद्धि प्रदायिनी अनुपम गरिमा शालिनी मन्त्र है। जो निम्न प्रकार है-

ओ३म् भू र्भुवः स्वः। तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि। धियो यो नः प्रचोदयात्।।

यह सुप्रसिद्ध गायत्री मन्त्र है। इसकी रचना गायत्री नामक छन्द में हुई है। 24 अक्षरों वाला प्रसिद्ध गायत्री मन्त्र वैदिक मन्त्रों में उच्चतम स्थान रखता है। वेद में गायत्री छन्द के मन्त्र और भी अनेक हैं परन्तु ऋषियों ने इस मन्त्र की विशेषता के कारण दैनिक उपासना के लिए गायत्री मन्त्र का विशेष रूप से विधान किया है। इस मन्त्र का देवता 'सविता' से सम्बन्ध के कारण इसका नाम "सावित्री-मन्त्र" भी है। इसका महात्य, प्रभाव, बड़प्पन ऊँचा होने के कारण इसको "गुरु मन्त्र", "महामन्त्र" नाम से भी जाना जाता है। मन्त्र में यद्यपि 23 अक्षर हैं, परन्तु सर्व प्रथम "ओ३म्" रहता है इसलिए 24 अक्षर हो जाते हैं। कुछ आचार्य "ओम्" के बिना मन्त्र का महत्त्व नहीं मानते। इसीलिये गायत्री मन्त्र का आरम्भ 'ओ३म्' के उच्चारण के साथ ही करते हैं।

गायत्री मन्त्र में तीन व्याहृति -

गायत्री मन्त्र के आरम्भ में "भूर् भुवः स्वः" ये तीन पद व्याहृति, ईश्वर के अनेक विशेष गुणों, भावों के प्रतीक पद कहे जाते हैं। वह ओम् परमात्मा 'भूः' स्वयं भू सत्ता वाला है। प्राणों का रक्षक है। उसे किसी ने नहीं बनाया है। उसका कोई कारण नहीं है। परमात्मा 'भुवः' है। दुःख विनाशक है। सृष्टि को बनाने वाला है। चेतनस्वरूप है। परमात्मा 'स्वः' सुखस्वरूप है। आनन्द का भण्डार है। उसकी सत्ता में दुःख का लेशमात्र भी नहीं है।

गायत्री का प्रथम पद ओ३म् -

गायत्री मन्त्र का सबसे प्रथम पद 'ओ३म्' है। वह परमात्मा का निज नाम है जो सबसे उत्तम नाम है। ओ३म् स्वरूप ईश्वर एक ही है। सृष्टिकर्त्ता है। सबका परम रक्षक है। उस ईश्वर के नाम अनेक हैं। जिस समय संसार में सर्वत्र विपत्ति और संकट के बादल मंडराते हैं, ऐसे निराशा भरे वातावरण में वह ओ३म् स्वरूप, परम रक्षक परमेश्वर ही हमारी रक्षा करते हैं।

एतदालम्बनं श्रेष्ठमेतदालम्बनं परम।
एतदालम्बनं ज्ञात्वा ब्रह्मलोके महीयते।।

इस ओम् नाम का सहारा सर्वोत्तम है। इस सहारे को जान लेने से मनुष्य ब्रह्मलोक को प्राप्त कर लेता है।

"तत्सवितुर्वरेण्यम्" - गायत्री मन्त्र में भगवान को 'सविता' के रूप में वरण करने की, अपनाने की प्रार्थना की गई है जो 'सविता' बनकर हमें प्रेरणा देता है। ज्ञान का प्रकाश करता है। समस्त जगत् को उत्पन्न करता है और सबका स्वामी है। समग्र ऐश्वर्य युक्त है। सब दुःखों का नाशक है ऐसे उस सविता देव को हम अपनावें।

"भर्गो देवस्य धीमहि" - जो परमेश्वर भर्गःस्वरूप है। जो सर्व श्रेष्ठ, सबसे पवित्र, सबसे अच्छा और तेज स्वरूप है, भगवान के उस उत्तम तेज का, प्रकाश का हम श्रद्धा, भक्ति और एकाग्र भाव से ध्यान करें जो दिव्य गुणों से युक्त, आनन्द एक रस तथा सुखों के प्रदान करने वाला परम देवादि देव महादेव है उसका ही सदा ध्यान करें।

"धियो यो नः प्रचोदयात्" - गायत्री मन्त्र में भगवान सविता से जो उत्तम बुद्धि का दाता है। परम शुद्ध तेजोमय और पाप को भून डालने वाला है, वरण करने के योग्य है, वह परमेश्वर हमारी बुद्धि को उत्तम मार्ग की ओर प्रेरित करे। हमारी बुद्धि सत्संग, स्वाध्याय, यज्ञ, ईश्वर-चिन्तन, परोपकार, सेवा, दान आदि श्रेष्ठ कर्मों में लगे। इसलिए कहा गया है- "विनाश काले विपरीत बुद्धि" विपरीत बुद्धि, कुबुद्धि विनाशकारी होती है। तुलसी दास जी ने ठीक ही कहा है-

जहाँ सुमति तहाँ सम्पत् नाना।
जहाँ कुमति तहाँ विपत् निधाना।।

संसार में यह देखने में आता है कि जहाँ सुबुद्धि होती है वहाँ सब कार्य सफल होते हैं। सम्पत्ति बढ़ती है और जहाँ दुष्ट बुद्धि होती है वहाँ अशान्ति, कार्यों में विघ्न, असफलता, अवनति, निराशा बनी रहती है इसलिए मन्त्र में उत्तम 'धी' बुद्धि के लिए प्रार्थना की गई है। इसीलिए गायत्री-मन्त्र बुद्धि-प्रदाता मन्त्र भी कहा जाता है।

गायत्री मन्त्र के जप की विधि -

1. गायत्री का जप प्रातः काल और सायं काल दो समय शुद्ध, पवित्र स्नान आदि करके करना चाहिए।
2. स्थान भी शुद्ध, पवित्र और एकान्त होना चाहिए। जैसे घर, बगीचा, नदी का किनारा, आश्रम, देवालय आदि शान्त सुगन्धित होना चाहिए।
3. गायत्री का जप सुखासन, गद्दी या कुश के आसन पर बैठकर, पवित्र विचारों के साथ, ईश्वर में मगन होकर, समर्पण भाव से करना चाहिए।
4. गायत्री जप से पहले प्राणायाम करना चाहिए। मन्त्र के अर्थ सहित, समझ पूर्वक, मौन रहकर, चिरकाल तक ध्यान करना चाहिए।

महर्षि दयानन्द जी जप के सम्बन्ध में लिखते हैं - "जंगल में अथवा एकान्त देश में जाकर सावधानी पूर्वक जल के समीप स्थित होकर, नित्य कर्म करता हुआ- सावित्री अर्थात् गायत्री मन्त्र का

www.thearyasamaj.org

उच्चारण अर्थ-ज्ञान और उसके अनुसार अपने चाल-चलन को बनावे। परन्तु यह जप मन से करना उत्तम है। न्यून से न्यून एक घण्टा ध्यान अवश्य करे। जैसे समाधिस्थ होकर योगी लोग परमात्मा का ध्यान करते हैं।" -सत्यार्थ प्रकाश

महर्षि के जीवन में आता है कि वह साधकों को गायत्री का जप बतलाया करते थे। एक बार महाराजा ग्वालियर से आपने कहा कि "भागवत-सप्ताह" की अपेक्षा गायत्री-जप (पुरश्चरण) अधिक श्रेष्ठ है।

गायत्री मन्त्र के जप का फल-

महर्षि मनु ने मनुस्मृति के द्वितीय अध्याय में श्लोक 77 से 104 तक गायत्री का महातम्य लिखा है-

य स्वाध्यायमधीयतेऽब्दं विधिना नियतःशुचि।
तस्य नित्यं क्षरत्येष पयो दधि घृतं मधुः।।

-मनु. अध्याय 2, श्लोक-107

अर्थात् (यः नियतः शुचिः) जो जितेन्द्रिय रहते हुए, शुद्ध होकर (विधिना अब्दं स्वाध्यायम् अधीयते) विधि पूर्वक एक वर्ष तक स्वाध्याय (गायत्री-जप, ओ३म् का जप) करता है। उसको सांसारिक सुख के पदार्थ जैसे दूध, दही, घृत और मधु तथा आध्यात्मिक आनन्द फल प्राप्त होता है। श्रृंगी ऋषि ने गायत्री को मोक्ष का मूल कारण बतलाया है-

सर्वात्मना हि सा देवी सर्व भूतेषु संस्थिता।
गायत्री मोक्ष हेतुर्वै मोक्षस्थानं लक्षणम्।।

अर्थात् (सर्व भूतेषु सर्वात्मना) सब प्राणियों में आत्मा रूप से (संस्थिता हि सा देवी) वह गायत्री निश्चित रूप से विद्यमान है। गायत्री मोक्ष का मूल कारण है। अर्थात् गायत्री जप से सर्व दुःखों से छुटकारा सम्भव है।

ऋषि विश्वामित्र जी इस मन्त्र के द्रष्टा हैं -

सप्रभं सत्यमानन्दं ह्रदये मण्डलेऽपि च।
ध्यायञ्जपेत् तद् इत्येतन्निष्कामी मुच्येत्अचिरात्।।

अर्थात् (सप्रभम् सत्यानन्दम्) प्रकाश सहित सत्यानन्द स्वरूप ब्रह्म का (हृदये मण्डले अपि च) हृदय प्रदेश में और सूर्य मण्डल में ध्यान (ध्यायन्) करता हुआ (निष्कामी जपेत्) निष्काम भाव से गायत्री मन्त्र का जप करे (अचिरात् तद् इत्येतन्) तो अविलम्ब संसार के आवागमन से छूट जाता है।

"गायत्री के जपन से , मिटें सकल सन्ताप।
प्रेम मगन हो भक्त जन, जपें निरन्तर जाप।।"

महामन्त्र जितने जग माहीं, कोऊ गायत्री सम नाहीं।

सुमिरन हिय में ज्ञान प्रकाशे, आलस, पाप, अविद्या नासे।।"

गायत्री के जप के सम्बन्ध में महानपुरुषों के अनुभव-

महात्मा आनन्द स्वामी जी के जीवन की घटना है कि "बचपन में पढ़ाई में उनका मन नहीं लगता था। निराशा और हताशा का जीवन था। परिवार, सगे सम्बन्धी, स्कूल के अध्यापक कोई उनसे प्रसन्न नहीं रहता था। अपनी इस समस्या को स्वामी नित्यानन्द जी के सम्मुख रखा। स्वामी जी ने गायत्री जप, अर्थ सहित, प्रातः -सायं जपने की प्रेरणा दी- बालक खुशहाल चन्द ने ऐसा ही किया। परिणाम स्वरूप कक्षा में अच्छे नम्बर आने लगे। पढ़ाई में मन लगने लगा। कार्यालय में मुखिया बना दिया गया। धन, ऐश्वर्य, यश, कीर्ति, गोधन, घोड़े, मोटरें, सेवा-भाषी पत्नी, सुयोग्य सन्तानें असाधारण सफलता प्राप्त हुई। सन्यास के बाद आनन्द स्वामी जी इस नाम से वैदिक धर्म और आर्य समाज एवं स्वामी दयानन्द जी के मन्तव्यों को आगे बढ़ाया।"

स्वामी विरजानन्द जी के जीवन की घटना -

जगत् गुरु स्वामी दयानन्द जी के गुरु प्रज्ञाचक्षु स्वामी विरजानन्द जी, जिनका बचपन का नाम वृजलाल था, बचपन में ही माता-पिता का साया सिर से उठ गया था। परिवार में बड़े भाई-भाभी अच्छा व्यवहार नहीं करते थे। चेचक के कारण बचपन में ही नेत्र ज्योति चली गयी थी। तिरस्कृत होकर घर छोड़ना पड़ा। एक महात्मा ने गायत्री का जप, ध्यान करने की प्रेरणा दी। स्वामी जी घण्टों ऋषिकेश में गंगा के पवित्र तट पर घण्टों गायत्री का जाप किया करते थे। परिणाम स्वरूप ज्ञान के नेत्र खुल गये। व्याकरण के सूर्य कहलाये। स्वामी दयानन्द जी जैसे आँखों वाले व्यक्ति को, अपनी वैदिक शिक्षा से, संसार का महामानव, समाज सुधारक, वैदिक ज्ञान का आचार्य बना दिया।"

स्वामी विवेकानन्द जी का कथन - "गायत्री सद्बुद्धि का मन्त्र है और परमात्मा से मांगने योग्य वस्तु सदबुद्धि ही है। सद्बुद्धि से सन्मार्ग मिलता है और सत्कर्म होते हैं तब सभी प्रकार के सुखों की प्राप्ति होती है।"

लोक मान्य बाल गंगाधर जी कहते हैं-

"कुमार्ग को छोड़कर श्रेष्ठमार्ग पर चलने की प्रेरणा गायत्री मन्त्र में विद्यमान है। इसी से सत् असत् का विवेक होता है। इसी से आत्मा को प्रकाश प्राप्त होता है।"

महात्मा गान्धी जी कहते हैं - "गायत्री मन्त्र का स्थिर चित्त और शान्त हृदय से किया हुआ जप आपत्ति काल के संकटों को दूर करने का प्रभाव रखता है। और आत्मोन्नति के लिए उपयोगी है।"

मानव-मात्र को गायत्री जप का उपदेश-

इस प्रकार गायत्री-मन्त्र की मानव-समाज के लिए महती उपयोगिता है। इसमें ईश्वर की स्तुति, प्रार्थना, उपासना भक्ति के तीनों अंग विद्यमान हैं।

अतः गायत्री मन्त्र के जप का अधिकार स्त्री-पुरुष, आबाल-वृद्ध, छोटे-बड़े, ऊँच-नीच सभी वर्ग के लिए है। सभी को भक्ति पूर्वक गायत्री-मन्त्र का पाठ करना चाहिए जिससे व्यक्ति का आत्म कल्याण सम्भव है।

www.thearyasamaj.org

Date of Posting 12 & 13, S.R.T. Nagar, ND-55
Date of Publication 8-10-2013

R.N. DEL BIL/2007/22120
DL (C)-14/1181/2011-2013

ओ३म्

– गतांक से आगे

THE VEDIC LIGHT

THE AGE OF THE VEDAS

(Swami Vidyanand Sarswati ji)

The age of Vedas according to some eminent historians of the day is as follows:

Maxmuller, Macdonel, keith
1400 B.C
Hang, Whitney, Wilson, Griffith
2000B.C
Jacobi
4000 B.C
B.G. Tilak
6000 B.C
N.B.Panagi
2, 40000 B.C.
Dinanath Shastri Chulait
3, 00,000 B.C

However, according to maxmuller – "After the latest researches into the history and chronology of the old Testament, we may now safety call the Rigveda, the oldest book, not only of the Aryans, but of the whole world." But in Physical Religion, Grifford Maxmuller says: "We could not hope to be able to lay down any terminus quo. Whether the Vedic hymns were composed in 1000 or 1500 or 2000 or 3000 years B.C., no power on earth could ever fix."

To A.C Das, some of the descriptions in the Vedas appear to refer such configuration of land as, according to geological hypothesis, could have existed in the Miocene or Piocene epoch, whose age is to be computer by some hundreds of thousands, if not millions of years. Scientists (Prof.Nagi and Zumberge of the university Ariyona) have found traces of ancient life and matter dating back to 2300 million years. The discovery was made in rocks, found in Transval area South Africa, 320 K.m. north of Johannesberg." – The tribune, July 13,1875.

The world's highest mountain range could be 200 million years old – twice as old as previously thought, a group of scientists said in a statement issued here (Bonn) by the West German Research group DFG on Friday – The Hindustan Times, dated Oct. 18, 1987.

According to Indian traditions, based on astronomical data, the Vedas were revealed 1, 97, 29, 490, 95(1995A.D.) years ago. The calculation, corroborated by the 'Samkalpa' almost invariably read out by our priests at the commencement of every yajna. The text of the 'Samkalpa' is as follows –

'ओं तत्सत् श्रीब्रह्मणे द्वितीये
पहरार्धेवैवस्वतमन्वन्तरे अष्टाविंशतितमे
कलियुगे कलेः प्रथमे चरणे
आर्यावर्त्तान्तर्गत एकदेशे–नगरे
संवत्सर–अयं ऋतु–मासे–पक्षे–तिथौ इदं
कार्यं क्रियते।'

Works on modern science almost corroborate this oriental view about the age of the earth. Compare the following –

Some good evidence that the real age of the earth is 2or 3 thousand million years, has been arrived at by the study of uranium and an istope lead (into which it irretrienally changes) in the layers of rocks.

Recent archaeological discoveries have carried the origin of man to millions of years back. And the Vedic research, as it advances, carries the antiquity of the Vedas ever further and yet further in the past. Latest theories tend to affirm that the Vedas are not only the oldest record of humanity but co-eval with man. The weight of scientific evidence is all against an infinitely, expended past, but the past – which we formerly reckoned as six thousand years cannot be shorter than 1800 million years, and may be far longer.

In the "Outline of Modern Knowledge' by William Rose we read: "Our globe must be about two thousand million years old." H.G Wells (An outline of History) said: "Astronomers and mathematicians give us 200 million years as the age of the earth as a body separate from the sun." It is regrettable that, ignoring all this latest scientific evidence corroborating the age of the earth and man inhabiting it, our teacher and leaders still continue to persist in their old, wrong and damaging views about their ancient and glorious heritage.

The four Vedas – The Vedas have been traditionally four from the very beginning. The whole of Sanskrit (Vedic as well as classical) literature proclaims with one voice that the Vedas are four and names them all separately. Western scholars like Bloomfield's, misled perhaps by the popular phrase 'Trayi – Vidya' hold the view that Atharva Veda was a later addition, as it was composed much later than the other three.

The Rigveda is admittedly the oldest book in the library of the world. A verse in the Rigveda says –

तस्माद्यज्ञात् सर्वहुतः ऋचः सामानि जज्ञिरे
छन्दासि जज्ञिरे तस्माद्यजुस्तस्मादजायत।।

If the Atharva Veda were a later production, how could it be included in the Regveda which was an earlier production? The fact is that the expression 'Trayi' actually denotes Veda's subjects put forth in three different styles – Viz. Knowledge, action and devotion, offered respectively in poetry, prose and song.

The Rigveda deals with theories and experiments. While the process of preparing re-agents and apparatus is recorded in the Yajurveda. Yajna is a Vedic expression for what we call experimentation. The direction, that the Mantra embody are, therefore, such as will enable us to perform scientific experiments which, when accomplished, Communicate to us knowledge of the Laws of Nature. The Atharva Veda is a also popularly known as Bhasajya Veda, as it mainly deals with the science of medicine. To talk of magic, witchcraft etc. in the Atharva Veda is misnomer – humbug.

Printed and published by Sh. N.M. Walecha Secretary on behalf of Arya Samaj, Rajinder Nagar and printed at Gurmat Printing Press, 1337, Sangatrashan, Pahar Ganj, New Delhi-55 Ph. : 23561625 and published at Arya Samaj, Rajinder Nagar, New Delhi-110060. *Editor :* Dr. Bhardwaj Pandey